मेरुतुंगसूरिरास-सार

—श्री भंवरलाल नाहटा

ऐतिहासिक साहित्य के निर्माण की ओर जैन विद्वानों का लक्ष सदा से रहा है। रास, भास, गीत, गहूंली, विवाहला तीर्थमाला प्रभृति भाषा कृतियों का, काव्य, पट्टावली, चरित्र प्रभृति संस्कृत ग्रन्थों का प्राचुर्य इस बातका प्रबल उदाहरण है। हमें इस प्रकार के साधन प्रचुरता से उपलब्ध हुए जिनमें से कतिपय तो ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह में हमने प्रकाशित किये। फिर भी जो प्राप्त होते हैं उन्हें समय-समय पर सामयिक पत्रों में देते रहते हैं जिससे जैन इतिहास के साधन विद्वानों के उपयोग में आ सके। कुछ वर्ष पूर्व, मेरुतुंगसूरि-रासकी नकल कलकत्ते में इतिहासतत्त्वमहोदधि जैनाचार्य श्री विजयेन्द्रसूरि के पास देखी और उसका आवश्यक सार नोट कर लिया था परन्तु कई स्थान संदिग्ध रह जाने से अभी लीमड़ी के भंडारसे रासकी मूलप्रति मंगाकर नकल कर ली और पाठकों की जानकारी के लिए ऐतिहासिक सार प्रकाशित किया जाता है।

अंचलगच्छ में भी मेरुतुंगसूरि बड़े प्रभावक और विद्वान आचार्य हुए हैं। अंचलगच्छीय म्होटी पट्टावली (गुजराती अनुवाद) जो कच्छ अंजारवाले शा. सोभचन्द धारणी की तरफ से प्रकाशित हुई है, उसमें ५८वें पट्टधर श्री मेरुतुंगसूरिजीका जीवनवृत्त प्रकाशित हुआ है। परन्तु कई बातें जनश्रुति के आधार से लिखी हुई हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से संशोधन की अपेक्षा रखती हैं। प्रस्तुत रास, सूरिजीके समकालीन—उनके स्वर्गवासके बाद शीघ्र ही रचित होनेसे इसमें वर्णित वृत्तांत प्रामाणिक हैं, कुछ बातें पट्टावलीमें विशेष हैं। खैर जो हो, बातोंमें अंतर हैं उनका दिग्दर्शन कराना ही यहाँ अभीष्ट है :—

१. पट्टावलीमें सूरिजीका जन्मस्थान नानागाम और जाति मीठडिया बहुरा लिखी है, जबकि रास में नानीग्राम प्राग्वाट बहुरा जातिमें जन्म होने का उल्लेख है।

२. माता का नाम पट्टावलीमें नाहुणदेवी और रासमें नालदेवी लिखा है।

३. दीक्षा संवत् पट्टावलीमें सं. १४१८ और रासमें १४१० लिखा है।

४. गृहस्थ नाम पट्टावलीमें मालव तथा रासमें वस्तिगकुमार लिखा है।

५. लोलाडईके नृप प्रतिबोधकी कथा पट्टावली में नहीं है, उसमें यवनसेनाके भय-निवर्तनार्थ सवा मन चावल मंत्रित कर देने और श्रावकों द्वारा उस सेनाके समक्ष फेंकनेसे शस्त्रधारी घुड़सवार होने से यवनसेना के भग जानेसे भयनिवर्तन की कथा लिखी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. पट्टावलीमें महेंद्रप्रभसूरिका सं· १४४४ में स्वर्गस्थ होना लिखा है, रासमें सं. १४४५ फा. व. ११ के दिन (मेरुतुंगसूरि का) महेंद्रप्रभसूरि के द्वारा गच्छनायकपद स्थापित करने का उल्लेख है।

७. सूरिजी का स्वर्गवास पट्टावली में जूनागढ़में सं. १४७३ में हुआ लिखा है, जबकि रासके अनुसार सं. १४७१ मार्गशीर्ष पूर्णिमा सोमवारको ही पाटण में हो चुका था।

रास में बहुत सी ऐतिहासिक महत्त्वपूर्ण बातें लिखी हैं जो पट्टावलीमें नहीं पायी जाती हैं। अतः एव यह रास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और अंचलगच्छके इतिहासमें संशोधनकी सुन्दर सामग्री प्रस्तुत करने के साथ-साथ नृपप्रतिबोधादि अनेक नवीन सामग्री प्रकाशमें लाता है।

रासमें सूरिजी की जिन कृतियों का उल्लेख है उनमेंसे धातुपारायण तथा अंगविद्याउद्धार अद्यावधि अप्राप्त हैं, जिनका अंचलगच्छके ज्ञानभंडारोंमें अन्वेषण होना चाहिए। संभव है कि और भी कतिपय ग्रंथ उपलब्ध हों क्योंकि रासमें उल्लिखित ग्रन्थोंके अतिरिक्त (१) भावक्रम प्रक्रिया (२) शतक भाष्य (३) नमुत्थुण टीका (४) सुश्राद्धकथा (५) उपदेशमाला टीका (६) जेसाजी प्रबन्ध (ऐतिहासिक ग्रंथ) का उल्लेख भी प्राप्त है।

अब पाठकोंके अभिज्ञानार्थ उपर्युक्त रास का संक्षिप्त ऐतिहासिक सार दिया जाता है।

प्रथमगाथा में गणधर श्री गौतमस्वामी को नमस्कार करके चौथी गाथा तक प्रस्तावनामें उद्देश, चारित्र-नायककी महानता, कविकी लघुता आदि वर्णन कर पांचवी गाथासे वीरप्रभुके पट्टधर सुधर्मस्वामी-जंबू-प्रभवादिकी परम्परामें, वज्रस्वामीकी शाखा के प्रभावक विधिपक्षप्रकाशक श्री आर्यरक्षितसूरि—जयसिंहसूरि—धर्मघोषसूरि—महेंद्रसूरि—सिंहप्रभ—अजितसिंह—देवेंद्रसिंह—धर्मप्रभ—सिंहतिलक—महेंद्रप्रभ तक अंचलगच्छके दस आचार्यों के नाम देकर ग्यारहवें गच्छनायक श्री मेरुतुंगसूरि का चरित्र ८वीं गाथासे प्रारम्भ किया है।

मरुमण्डल में नानी नामक नगरमें बुहरा वाचारगर और उसके भ्राता विजयसिंह हुए, जिन्होंने सिद्धान्तार्थ श्रवणकर विधिपक्ष को स्वीकार किया। विजयसिंहके पुत्र वइरसिंह बहुरा प्राग्वाटवंशके शृंगार, विचक्षण; व्यवसायी, महान् दानी और धर्मिष्ठ हुए। उनकी नालदेवी नामक स्त्री शीलालंकारधारिणी थी। एक बार नालदेवीकी कुक्षिमें पुण्यवान् जीव देवलोकसे च्यवकर अवतीर्ण हुआ, जिसके प्रभावसे स्वप्नमें उसने सहस्रकिरणधारी सूर्य को अपने मुखमें प्रवेश करते हुए देखा। चक्रेश्वरीदेवी ने तत्काल आकर इस महास्वप्न का फल बतलाया कि तुम्हारे मुक्तिमार्ग-प्रकाशक ज्ञानकिरणयुक्त सूर्यकी तरह प्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा, जो संयममार्ग ग्रहणकर युगप्रधान योगीश्वर होगा। चक्रेश्वरीके वचनों को आदर देती हुई, धर्मध्यानमें सविशेष अनुरक्त होकर माता गर्भ का पालन करने लगी। सं. १४०३ में पूरे दिनोंसे पांचों ग्रहोंके उच्च स्थानमें आने पर नालदेवीने पुत्रको जन्म दिया। हर्षोत्सवपूर्वक पुत्र का नाम वस्तिगकुमार रखा गया। क्रमशः बालक बड़ा होने लगा और उसमें समस्त सद्गुण आकर निवास करने लगे। एक बार श्री महेंद्रप्रभसूरि नाणिनगरमें पधारे। उनके उपदेशसे अतिमुक्तकुमारकी तरह विरक्त होकर मातापिता की आज्ञा ले सं. १४१० में वस्तिगकुमार दीक्षित हुए। वइरसिंह ने उत्सवदानादि में प्रचुर द्रव्य व्यय किया। सूरि महाराजने नवदीक्षित मुनिका नाम 'मेरुतुंग' रखा।

मुनि मेरुतुंग बुद्धि-विचक्षणतासे व्याकरण, साहित्य, छंद, अलंकार और आगम, वेद, पुराण प्रभृति समस्त विद्याओंके पारंगत पंडित हो गये। वे शुद्ध संयम पालन करते हुए अमृत-सदृश वाणीसे व्याख्यानादि देते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थे। श्रीमहेंद्रप्रभसूरिने इन्हें आचार्यपदके सर्वथा योग्य जानकर सं. १४२६ में पाटणमें सूरिपदसे अलंकृत किया। संघपति नलपालने नंदिमहोत्सव, दानादि किये। तदनंतर मेरुतुंगसूरि, देशविदेशमें विचरकर उपदेशों द्वारा भव्यजीवों को एवं नरेंद्रादिको प्रतिबोध देने लगे। आसाउली में यवनराज को प्रतिबोधित किया। सं. १४४४ का चातुर्मास लोलाइडमें किया, वहाँ राठौरवंशी फणगर मेघराजा को १०० मनुष्योंके साथ धर्ममें प्रतिबोधित किया।

एक बार सूरिजी संध्यावश्यक कर कायोत्सर्ग ध्यान में स्थित खड़े थे कि एक काले सांपने आकर पैर में डस दिया। सूरि महाराज, मेतार्य, दमदन्त, चिलातीपुत्र की तरह ध्यान में स्थिर रहे। कायोत्सर्ग पूर्ण होने पर, मंत्र, तंत्र, गारुड़िक सब प्रयोगों को छोड़ कर भगवान् पार्श्वनाथ की प्रतिमा के समक्ष ध्यानासन जमाकर बैठ गये। ध्यान के प्रभाव से सारा विष उतर गया। प्रातःकालीन व्याख्यान देने के लिए आये, संघ में अपार हर्षध्वनि फैल गई। तदनंतर मेरुतुंगसूरि अणहिलपुर पाटण पधारे। गच्छनायक पदके लिए सुमुहूर्त देखा गया, महिनों पहले उत्सव प्रारंभ हो गया। तोरण, बंदरवाल मंडित विशाल मंडप तैयार हुआ, नाना प्रकार के नृत्य वाजित्रों की ध्वनि से नगर गुंजायमान हो गया। ओसवाल रामदेव के भ्राता खीमागर ने उत्सव किया। सं. १४४५ फाल्गुन वदी ११ के दिन श्री महेंद्रप्रभसूरिजी ने गच्छनायक पद देकर सारी गच्छधुरा श्री मेरुतुंगसूरि को समर्पित की। संग्रामसिंह ने पदठवणा करके वैभव सफल किया। श्री रत्नशेखरसूरिको उपाचार्य स्थापित किया गया। संघपति नलपाल के सांनिध्य में समस्त महोत्सव निर्विघ्न संपन्न हुये।

सूरि महाराज निर्मल तपसंयमका आराधन करते हुवे योगाभ्यास में विशेष अभ्यस्त रहने लगे। हठयोग, प्राणायाम, राजयोग आदि क्रियाओं द्वारा नियमित ध्यान करते थे। ग्रीष्म ऋतु में धूपमें और शीतलकाल की कड़ाके की सर्दी में प्रतिदिन कायोत्सर्ग करके आत्मा को अतिशय निर्मल करने में संलग्न थे। एक बार आप आबूगिरि के जिनालयों के दर्शन करके उतरते थे, संध्या हो गई। मार्ग भूलकर विषमस्थान में पगदण्डी न मिलने पर बिजली की तरह चमकते हुए देवने प्रकट होकर मार्ग दिखलाया। एक बार पाटण के पास सथवाडे सहित गुरु श्री विचरते थे, यवन सेना ने कष्ट देकर सब साथको अपने कब्जे में कर लिया। सूरिजी यवनराज के पास पहुंचे। उनकी आकृतिललाट, देखकर उसका हृदय पलट गया और तत्काल सब को मुक्त कर लौटा दिया। एक बार गुजरात में मुगलों का भय उत्पन्न होने पर सारा नगर सूना हो गया, पर सूरिश्री खंभात में स्थित रहे। कुछ ही दिनों में भय दूर हुआ और सब लोग लौट आये। सूरिजी बाड़मेर विराजते थे, लघु पोशाल के द्वार पर सात हाथ लंबा सांप आकर फुंकार करने लगा, जिससे साध्वियाँ डरने लगीं। उन्होंने सूरिजी को सूचना दी, सांप तत्काल स्तंभित हो गया। एक बार सूरिजी ने सं. १४६४ में सांचौर चौमासा किया। अश्वपति (बादशाह) विस्तृत सेना सहित चढ़ाई करने के लिए आ रहा था। सब लोग दशों दिशि भागने लगे। ठाकुर भी भयभीत था, सूरिजी के ध्यान बल से यवनसेना सांचौर त्याग कर अन्यत्र चली गई। इस प्रकार सूरिजी के अनेकों अवदात हैं।

सूरिजीने साहित्य निर्माण भी खूब किया, इस रास में निम्नोक्त ग्रंथरचना का उल्लेख है:— (१) व्याकरण (२) षट्दर्शननिर्णय (३) शतपदीसार (४) रायनाभाक चरित्र (५) कामदेव कथा (६) धातुपारायण (७) लक्षणशास्त्र (७) मेघदूत महाकाव्य (९) राजमतिनेमिसंबंध (१०) सूरिमंत्रोद्धार (११) अंगविद्याद्धार (१२) सत्तरी भाष्यवृत्ति इत्यादि।

सूरिजीने सत्यपुर नरेश राड़ पाता, नरेश्वर मदनपाल को प्रतिबोध दिया। उड़र मलिक भ (?) के पुत्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूरदास को प्रतिबोध देकर धोलका के कलिकुण्ड पार्श्वनाथ की पूजा करवाई। जंबू (जम्मू) नरेश राउ गजमल गदूआ जीवनराय प्रभृति श्री मेरुतुंगसूरि के चरणवंदनार्थ आये। सूरिजी अपार गुणों के समुद्र हैं, नये नये नगरों के संघ वंदनार्थ आते हैं। साह सलखा सोदागर कारित उत्सव से, श्री महीतिलकसूरि एवं महिमश्री महत्तरा का पदस्थापन जम्मू में साहू वरसिंघ कारित उत्सव से हुआ। खीमराज संघपति द्वारा खंभातमें उत्सव होने पर मेरुनंदनसूरि की पदस्थापना हुई। माणिक्यशेखर को उपाध्यायपद, गुणसमुद्रसूरि, माणिकसुंदरसूरि को साह तेजा कारित उत्सव में खंभनयर में और वहीं जयकीर्तिसूरि को संघवी राजसिंह कृत उत्सव से आचार्यपद स्थापित किया। इस प्रकार छह आचार्य, ४ उपाध्याय तथा १ महत्तरा वाणारिस, पन्यास, पवत्तिणी प्रभृति संख्याबद्ध पदस्थापित व दीक्षित किये।

सूरिजीने पट्टण, खंभात, भड़ौंच, सौपारक, कुंकण, कच्छ, पारकर, सांचौर, मरु, गुज्जर, झालावाड, महाराष्ट्र, पंचाल लाटदेश, जालोर, घोघा अनां, दीव, मंगलपुर नवा प्रभृति स्थानों में आराधनापूर्वक विहार किया। अंत में आराधनापूर्वक सं. १४७१ में मार्गशीर्ष पूर्णिमा सोमवार के पिछले प्रहर उत्तराध्ययन श्रवण करते हुये अर्हतसिद्धों के ध्यान से श्री मेरुतुंगसूरिजी स्वर्ग सिधारे।

❀ ❀ ❀

जं जं समयं जीवो आविसइ जेण जेण भावेण।
सो तंमि तंमि समए, सुहासुहं बंधए कम्मं॥

जिस समय प्राणी जैसे भाव धारण करता है, उस समय वह वैसेही शुभ-अशुभ कर्मों के साथ बंध जाता है।

तं जइ इच्छसि गंतुं, तीरं भवसायरस्स घोरस्स।
तो तवसंजमभंडं, सुविहिय! गिण्हाहि तूरंतो॥

अगर तू घोर भवसागर के पार जाना चाहता है, तो हे सुविहित! तू तप-संयमरूपी नौका को तुरन्त ग्रहण कर।

धम्मो वत्थुसहावो, खमादिभावो य दसविहो धम्मो।
रयणत्तयं च धम्मो, जीवाणं रक्खणं धम्मो॥

वस्तु का स्वभाव धर्म है। क्षमादि भावों की अपेक्षा वह दस प्रकार का है। रत्नत्रय (सम्यग-दर्शन, सम्यग ज्ञान और सम्यक् चारित्र) तथा जीवों की रक्षा करना उसका नाम धर्म।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org